विजयदांन देथा का व्यक्तित्व एवं पहचान

*डॉ. गोकुल चन्द सैनी

साहित्यकार सर्वप्रथम एक मनुष्य है। मनुष्य होने के कारण वह एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज से प्रभावित होता है समाज में जीता है, सामाजिक जीवन से अपने अनुभव प्राप्त करता है और उन अनुभवों को आत्मसात करके आत्मानुभूति का पुनः सृजन अपने साहित्य के रूप में करता है। साहित्यकार की रचनाशीलता के बीच और साहित्यकार के जीवनानुभव के बीच एक गहरा सम्बन्ध होता है। रचनाकार ने जिस परिवेश में जन्म लिया, जिस परिवार में पला और बड़ा हुआ वहाँ उसको व्यक्तित्व के विकास के अपार अवसर मिलते हैं इसलिए रचनाकार के जन्म, परिवार और परिवेश का परिचय भी आवश्यक प्रतीत होता है।विजयदांन देथा आज बात साहित्य के क्षेत्र में एक जाना माना नाम है । गाँव में रहते हुए ग्रामीण जीवन के घात–आघात को देथा जी ने जितना अधिक समझा है उतना अधिक सच्चाई से उसे अभिव्यक्त किया है

(क) पारिवारिक पृष्ठभूमि –

1. जन्म व परिवार –

विजयदांन देथा का जन्म 1 सितंबर, 1926 को राजस्थान के जोधपुर जिले के बोरूंदा ग्राम में हुआ। भारतीय भाषाओं के रचनाकारों के बीच आपको प्यार से 'बिज्जी' कहकर पुकारा जाता है । बिज्जी के. दादा श्री जुगतीदान देथा राजस्थानी की डिंगल काव्य धारा के सुप्रसिद्ध कवि थे, इनके पिता श्री सबलदांन जी देथा (1886–1930) भी पुश्तैनी चारणी काव्य–परम्परा के निपुण रचनाकार थे। इनकी माता का नाम सिरूकँवर (1896–1946) था तथा इनका विवाह सायर कँवर के साथ (1950) में हुआ।

2. शिक्षा –

विजयदांन देथा की औपचारिक शिक्षा वर्तमान पाली जिले के जैतारण कस्बे की प्राथमिक शाला से शुरू हुई । उच्च प्राथमिक की पढ़ाई करने उन्हें बाड़मेर जाना पड़ा। यहां छटी कक्षा में एक कविता की रचना कर आपने अपने लेखकीय जीवन का आरम्भ किया। शाला के मुख्याध्यापक श्री प्रहलाद राय के स्नेहिल व्यक्तित्व ने आपके मन पर गहरी छाप छोड़ी तदंतर बिज्जी जोधपुर के तत्कालीन दरबार हाई स्कूल में भर्ती हुए। इस स्कूल की पढ़ाई के दौरान बिज्जी की रचनात्मकता का विस्फोट नित्य–नई शरारतें खोजने में हुआ । अतंतः मुख्य अध्यापक गजेन्द्र नारायण सिंघल द्वारा पिटाई के लिए उठाई गई छड़ी पकड़ने के परिणामस्वरूप नवीं कक्षा में यह स्कूल छोड़ना पड़ा। फिर अपने चचेरे भाई श्री कुबेरदान देथा की प्रेरणा और संबल से किसी तरह पंजाब बोर्ड से मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की और जोधपुर के जसवंत कॉलेज में उच्च शिक्षा के लिए प्रवेश ले लिया। इस कॉलेज में शिक्षा के दौरान सन् (1947) में उनका 'उषा' नामक प्रथम काव्य–संग्रह प्रकाशित हुआ।

2. जीविका –

बिज्जी ने आजीविका के लिए कभी कोई कार्य नहीं किया । अस्सी की हदें छूती वय में वे आज भी किसी किशोर जैसी उर्जा के साथ अपने लेखन और पठन में निमग्न हैं । पढ़ने में उन्हें कुछ अच्छा या बुरा लग जाए, तो न लेखक के रूतबे की परवाह करते हैं, न वय का लिहाज – उनकी प्रतिक्रिया सहजस्फूर्त होती है। उन्होंने स्वीकार भी किया है कि रवि बाबू को पढ़ तो मैंने पहले ही लिया था, पर उनके महाप्रकाश में पहली बार (1984) में उनकी कहानी 'स्त्रीर पत्र' पढ़कर ही पहुंच पाया। ऐसा कहने वाले विजयदांन देथा बेहद पढ़ाकू हैं। आपको यह कहते अक्सर पाया जाता है कि मैं पढ़–पढ़कर एक यही सच जान पाया हूँ कि पढ़ना सीख रहा हूँ।

(ख) साहित्यिक पृष्ठभूमि–

वाचिक परम्परा की लोकथाओं का लेखन से शुरू हुई विजयदांन देथा की यह कथायात्रा आज जिस मुकाम पर पहुंची है, वह कदाचित भारतीय–कथा साहित्य की एक अत्यंत विरल तथा विलक्षण घटना है। कोयल के कुहुकने, मोर के नाचने या तितली के पंख पफ़फड़ाने जैसी सहजता का आभास देती आपकी कहानियों में अभिप्राय और अभिव्यंजना की जैसी अद्भुत गूंज सुनाई देती है, वह मुग्धकारी तो होती ही है, विस्मयकारी भी कम नहीं होती। लोककथा के अनंत नभ में उनकी इस मौलिक लेखकीय उड़ान का दूसरा कोई प्रतिद्वन्दी दिखाई नहीं देता और कदाचित आने वाले समय को भी इसके लिए लंबी प्रतीक्षा करनी होगी ।

बिज्जी ने अपनी लेखन–यात्रा हिंदी से शुरू की थी । उन्होंने जोधपुर से प्रकाशित होने वाले ज्वाला साप्ताहिक में दोजख की सैर 'घनश्याम पर्दा गिराओ' तथा (हम सभी मानव हैं कॉलम लंबे समय तक नियमित रूप से लिखे। (1949 से 19 52) तक इस दौर में ज्वाला, 'आग', अंगारे' तथा 'रियासती साप्ताहिक' में आपने भरपूर कलम माँजी। अनेक पत्र–पत्रिकाओं का संपादन तथा सह–लेखन करते हुए अकस्मात् बिज्जी के जीवन में एक निर्णायक मोड़ आया । सन (1959) में उन्होंने हिंदी छोड़कर राजस्थानी में लिखने का संकल्प लिया और अपने गाँव बोरूंदा लौट आए। 'बंता री फुलवाड़ी' शीर्षक से लोक–कथाओं के पुनर्सृजन की उनकी यात्रा यहीं से आरंभ हुई। इन कहानियों की लेखन–प्रक्रिया, यह रही कि "न लिखने से पहले सोचा, न लिखकर पढ़ा और न लिखकर कुछ काटा। इंधर छापे की मशीन थी, उधर बिज्जी की कलम । मशीन के साथ मन से होड़ करते हुए बांता की कफुलवाड़ी के 13 भाग तैयार हो गए।1

प्रख्यात फिल्मकार मणि कौल ने सन 1973 में आपकी 'दुविधा' कहानी पर एक कथा–फिल्म बनाई2 तदंतर बिज्जी की कहानियां अनुवाद के माध्यम से भारतीय भाषाओं में पहुंची और उन्हें एक विलक्षण कथाकार के रूप में पहचाना जाने लगा। आपकी इस पहचान में हिंदी में प्रकाशित आपके दो कहानी संग्रहों दुविधा" और अन्य कहानियां तथा 'उलझन' की बड़ी भूमिका रही।3 हिंदी ने बिज्जी को बेहद मान देकर स्वीकार किया और हिंदी पत्र–पत्रिकाओं नें आपकी कहानियां प्रमुखता से छापीं ।

आपके अनुवादक कैलाश कबीर ने राजस्थानी मुहावरों को हिंदी गद्य की लय में कुछ इस तरह पिरोया कि आपकी कहानियों ने हिंदी पाठकों को एक नए ही आस्वाद के समीप ला खड़ा किया। हिंदी के एक आलोचक ने लिखा, "यदि हिन्दी साहित्य अकादमी की ओर से हिंदी के सुप्रसिद्ध कथाकार उदय प्रकाश ने सन् 2000 के पास एक विजयदांन देथा हो, तो हिन्दी कहानी का गतिरोध दूर हो जाए।4

बिज्जी की कहानियों का जादू फिल्मकारों, नाटय–निर्देशकों व सीरियल–निर्माताओं के भी सिर चढ़कर बोला है। मणि कौल के अलावा श्याम बेनेगल और प्रकाश झा ने आपकी कहानियाँ पर फिल्में बनाई हैं। 'फिल्मकार

अमोल पालेकर' ने भी आपकी दो कहानियों 'दुविधा' कथा 'दोहरी जिंदगी' पर फिल्में बनाने का अंनुबंध किया 'दुविधा' पर तो अब फिल्म बन चुकी है। खूब चर्चित रही और ऑस्कर पुरस्कार के लिए चयनित हुंई,5 मैंने केवल स्वंय बिज्जी पर फिल्म बनाई वरन जयपुर दूरदर्शन के लिए 'बिज्जी का खजाना' नाम से आधे–आधे घंटे की फिल्में भी तैयार की हैं। बिज्जी की दर्जनों कहानियों पर देश के विभिन्न शहरों में नाट्य–मंचन हुए हैं । इनमें से प्रख्यात रंग–निर्देशक तनवीर द्वारा निर्देशित आपकी कहानी पर आधारित नाटक "चरणदास चोर को देश–विदेश में बेहद सराहना मिली है ।

1. पुरस्कार –

"विजयदांन देथा उर्फ बिज्जी को अब तक अनेक परस्कारों से समादृत किया जा चुका है । उनमें "सहित्य अकादमी" समेत भारतीय भाषा परिषद कलकत्ता, बिहारी पुरस्कार, के.के. बिड़ला फाउंडेशन (दिल्ली), नाहर पुरूस्कार (मुंबई), राजस्थानी श्री (जयपुर), राजस्थान रतन (अजमेर), दी ग्रेट सन ऑफ राजस्थान, ऑल इंडिया कांफ्रेस ऑफ इंटेलेक्चुअल्स, मरूधरा, कलकत्ता, दीपचन्द जैन साहित्य पुरूस्कार (दिल्ली) प्रमुख हैं। दूरदर्शन व आकाशवाणी ने श्री देथा को इमेरिटस फेलोशिप देकर समादृत किया है। भारतीय ज्ञानपीठ ने राजस्थान के प्रेमाख्यानों पर कथात्मक–लेखन करने के लिए एक वर्षीय फेलोशिप आपको प्रदान की है।6

2. विजयदांन देथा की विदेश यात्राएँ –

विजयदांन देथा ने एमस्टर्डम, बेल्जियम, पेरिस, हम्बुर्ग (1918), फ्रैंकफर्ट, हेडलबर्ग (सितम्बर 1983), मास्को, लेलिनग्राद (1991) तथा चीन (नबम्बर 1991) की यात्राएं भी की हैं। इनकी फ्रैंकफर्ट की विदेश यात्रा का मुख्य उद्देश्य वहां पर लगने वाले पुस्तक मेले से है । वे इस मेले में सम्मिलित होने वहां गये। बाकी विदेश यात्राओं का इनका उद्देश्य अपने घनिष्ठ मित्रों से मिलना व अन्य साहित्यिक गतिविधियों को बढ़ावा देना रहा है । राजस्थानी भाषा के प्रसिद्ध लेखक बिज्जी (विजयदांन देथा) की बातों पर कुछ लिखना कितना कठिन कार्य है, इसका अनुमान वही लगा सकता है जो इन कहानियों का सतत प्रभावग्राही पाठक रहा हो। बिज्जी अपनी कथा यात्रा में अब तक लगभग सात–आठ सौ कहानियों का प्रणयन कर चुके हैं, प्रमुखतः 'बातां री फुलवाड़ी' के तेरह भागों में प्रकाशित हो चुकी है। ये 13 भाग सन 1960 से 1976 तक के समय में लिखे गये। इसी से बिज्जी राजस्थानी भाषा व साहित्य की एक महती उपलब्धि भी बन गये हैं। इन्होंने पहले तो लोक कथाओं का ही पुनर्सजृन किया, पर आठवें दशक में आते–आते उनका रूझान राजस्थानी में मौलिक कथाओं की रचना की ओर भी हुआ तथा इसी मन्तव्य के चलते इन्होंने एक से एक श्रेष्ठ कहानियां रचकर राजस्थानी कथा जगत को समर्पित की। विजयदांन देथा का नाम हिन्दी में अब अपरिचित नहीं है। बल्कि प्रायः उन्हें हिन्दी का न मानना मुश्किल लगता है। वैसे वे राजस्थानी के कहानीकार हैं और उन्होंने जितनी कहानियां लिखी हैं, उतनी शायद ही किसी अन्य भारतीय कहानीकार ने लिखी हों। विजयदांन देथा की ये कहानियां गम्भीर और सामान्य पाठकों को कहीं गहरे तक प्रभावित करती है। जो सस्ते फूटपाथी साहित्य से जंग कर सकने का सामर्थ्य रखती हैं, वहीं हिन्दी के नये–पुराने कथाकारों को यह बताने में भी सफल होती हैं कि कहानी में गम्भीरता और पठनीयता का ग्रुण एक साथ कैसे लाया जा सकता है । इस तरह के विचारों के नहले पर दहले से पगी हुई विजयदांन देथा की ये कहानियां पढ़ने के बाद पाठक कई दिनों तक उनके प्रभाव में यों बहता है कि कुछ और पढ़ने की ईच्छा तक नहीं होती। कहानियों का एक–एक शब्द, कहावत और मुहावरा अपनी सार्थकता प्रमाणित करता है। हिन्दी का पाठक इन कहानियों को पढ़कर एकबारगी यह सोचने को बाध्य होता है कि समकालीन हिन्दी कहानी के पास एक भी विजयदांन देथा क्यों नहीं है? आज तमाम लिखी जाने वाली कहानियों में इन कहानियों का पढ़ना एक अनूठा, दुर्लभ, अनुभव ही नहीं, इस बात का सूचक भी है कि समसामयिक कहानियों का एक रास्ता इधर से भी जाता है– जो साफ चिकना और बेहद आकर्षक है। यह आकर्षक

रोचकता का ही आकर्षण नहीं बल्कि मूल में ऐसे चिन्तन का भी आकर्षण है, जो मध्ययुगीन सामन्ती मूल्यों पर चोट करता है, सत्ता व्यवस्था और उसके चाटुकारों को नंगा करता है तथा स्त्री और पुरूष के सम्बन्धों की भी असमानता प्रकट करता है। इस तरह ये कहानियां लोक–कथाओं की बुनावट रखते हुए भी आधुनिक तेवर रखती हैं। उनकी कथाओं में निरन्तर कुछ घटित होता रहता है और वह क्यों घट रहा है, इसकी जानकारी वह खुद नहीं देते। पाठकों की विचारशक्ति पर छोड़ देते हैं। जबकि तथाकथित आधुनिक कथाकार मनस्थिति की कथा लिखते हैं और दावा करते हैं कि वह मनोवैज्ञानिक गुत्थी सुलझा रहे हैं। विजयदांन देथा यह श्रम नहीं पालते। उनकी कहानियां आज की कहानी यात्रा पर नये तरह से सोचने को विवश करती हैं और इतना तो संकेत करती ही हैं कि कथा के पुराने उपकरण इतने बेजान नहीं हो गये हैं, जितना कि समझा जाता है। यदि उनका सही, सधा, दक्षतापूर्ण इस्तेमाल किया जाये तो कहानी को नयी ताकत मिलेगी और वह ताकत ऐसी होगी जो हर तरह के पाठक को बांधने में समर्थ होगी। आगे आने वाली कहानी का रास्ता इन लोक कथाओं और लोक–अभिप्रायों से होकर है। बशर्ते लेखक की दृष्टि आधुनिक और समसामयिक हो। विजयदांन देथा की इन कहानियों से नये कहानी लेखक बहुत कुछ सीख सकते हैं और पाठकों के लिए तो यह अनमोल खजाना है। उनकी सभी कहानियां एक–से–एक बढ़कर हैं ।

बातां री फूलवाड़ी की कथाओं में अन्य भारतीय भाषाओं की लोक कथाओं की तुलना में इनकी समानता, विभिन्नता का अध्ययन बेहद दिलचस्प होगा। घुमन्तु बनजारों के आत्मतुष्ट, स्वाभिमान और सत्य के लिए समर्पित जीवन की प्रारम्भिक सामाजिक स्थिति से लेकर रजवाड़ों, भाटों, कारिन्दों, सैनिकों, व्यापारियों, धनवानों, बारहठों और दरबारी मुसाहिबों के वैविध्यपूर्ण मध्ययुगीन सामन्ती जीवन की संस्कतियों और विकृतियों को समग्र रूप से प्रस्तुत करने वाली ये कथाएं वर्तमान व्यवस्था और तंत्र में मौजूद परिवर्तित तत्वों के सामने भी वही प्रश्न खड़े करती हैं, जिन्हें पहले सामूहिक–सार्वजनिक रूप में श्रोताओं के बीच उठाती थीं। ये कथाएं मध्ययुगीन सामन्ती मान मूल्यों, धर्म, न्याय, ईश्वर, सत्य, स्त्री–पुरूष सम्बन्धों में उत्पन्न विकृतियों, आडम्बरों, पर पूरे तीखेपन के साथ चोट करती हैं। रनिवासों में चलने वाली वासना के व्यापारों, जी–हजूरी के माहौल, सत्ता के व्यक्ति की चेतना पर पड़ने वाले दबावों के प्रभाव के परिणामों का इतना खुलासा करने वाली ये कथाएं, केवल मनोरंजन का माध्यम होती थी। ऐसा मानना इनमें निहित प्रगतिशील सामाजिक–राजनीतिक तत्वों, अभिप्रायों की जान–बूझकर अपेक्षा करना है। धर्म, नैतिकता, स्वार्थ, ईर्ष्या अहकार, धन और सत्ता के अवांछित हस्तक्षेप के कारण व्यक्ति के अस्तित्व पर कई तरह के संकट आये, जिनकी वजह से अक्सर ताकतवर की मनमानी को बल मिला। इन कहानियों में विकास की यह प्रक्रिया अपनी पूरी जटिलता में अभिव्यक्त हुई है।

'फुलवाडी' की कथाओं के लेखक हैं – विजयदान देथा। लेखक के पास सशक्त राजस्थानी शब्दावली है, कहावतें–मुहावरों का भंडार है, कल्पना की उर्वरक क्षमता है और सबसे बड़ी बात यह है कि उन्हें मालूम है कि –कथा के माध्यम से उन्हें कहना क्या है ? संभवतया फुलवाड़ी के सभी भागों में एक भी कथा ऐसी नहीं है जिसके माध्यम से किसी न किसी साक्षेप सामाजिक मूल्य का मंडन न हुआ हो अथवा सड़ी–गली व्यवस्था का खंडन न हुआ हो। विजयदांन देथा ने असामाजिक मूल्यों को क्षण भर क लिए भी क्षमा नहीं किया और न क्षण भर के लिए शोषित और दरिद्रों की टोली का साथ छोड़ा। किसी भी लोक कथा में सामाजिक विसंगति या विशेषता का प्रसंग आया तो विजयदांन देथा की कलम कथ्यात्मकता से कुछ हट गई और उसने एक प्रहारात्मक ढ़ंग से कथा के आक्रामक तत्व को आलोकित कर दिया। लोक कथा के साथ लेखक का यह सम्बन्ध 'फुलवाड़ी' की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना है। लेखक की दृष्टि में दो तथ्यों का आधार दिखाई देता है। एक है कथा का मूल–घटनाक्रम अथवा कथ्यात्मक या संग्रहित कथा की अपनी क्रमिक घटनावली और दूसरा है इनके अंतरंग से उत्पन्न एक नियोजित सत्य।

उदाहरण के तौर पर हम विजयदांन देथा द्वारा लिखित 'फितरती चोर' की कथा को लें। इस कथा में एक गुरू से चोर का शिष्यत्व ग्रहण करना, चार सौगंधें लेनी, पांचवी सौगन्ध के लिये गुरु का आदेश, चोर का सत्य बोलना, सत्य बोलकर चोरियों में सफलता प्राप्त करना, रानी द्वारा अपने एकांत महल में चोर को बुलाया जाना, उसको सोने के थाल में भोजन खिलाना, उसे हाथी पर सोने के होदे पर बिठाकर नगर में घुमाना, उसे राजा बनाने का प्रस्ताव करना एवं इसके साथ सहवास करने को कहना और अंत में चोर की हत्या करवा देने की क्रमिक घटनावली मिलती है। जहां से उस कथा को सुना जाये, उसे प्रस्तुत करने की सच्चाई को घटनाक्रम में ज्यों का त्यों रखा गया है। लेकिन वस्तु सत्य यह है कि घटनाओं का यह क्रम एक निर्जीव कथा है। कथा के अन्तरंग में एक छोटा सा हृदय कंपित है। उस कंपित हृदय को यदि यूं ही छोड़ दिया जाये तो इस कथा की रिक्तता को कला के सौन्दर्य का सहारा नहीं मिलेगा और कथा एक जड़वत घटनाचक्र तक ही सीमित रह जायेगी। यदि इसी सत्य को हम लोक कथा की –सहज कथन शैली में भी देखें तो उस में घटनाओं के माध्यम से आदमी की अंतर्मन को झकझोरने की प्रवृति मिलती है। देथा जी की कल्पना और भाषा की सजीवता ने लोक कथाओं के अपने मर्म को नए रूप में अभिव्यक्त किया है और यही सत्य 'बातां री फुलवाड़ी' का एक सशक्त आधार बना रहेगा। लोक कथा ने जिस सामाजिक मर्म को युगों तक अपने हृदय में संजोये रखा और कंठ की परम्परा में जीवित रखा, उसे लेखक के मन ने पहचाना और उसने वर्तमान समाज की आंखों में इन्ही परम्परागत प्राण कथाओं के माध्यम से सीधे देखने का प्रयत्न किया।

***व्याख्याता– हिन्दी**
स्वामी विवेकानन्द राजकीय महाविद्यालय,
खेतड़ी

सन्दर्भ

1. मूलप्रश्न : सितम्बर–दिसम्बर 2004, संपादक – वेददान सुधीर, सुबोध गुप्ता, 3 न्यू अहिंसापुरी, ज्योति सकल के पास, फतेहपुरा, उदयपुर
2. मेरे लेखन की कहानी, लोक संस्कृति (दिसम्बर 2005) –विजयदान देथां, कैलाश कबीर. पृष्ठ संख्या 85
3. दुविधा व अन्य कहानियां और उलझन कहानी संग्रह–राजकमल प्रकाशन, 1979
4. जिन्दगी के अंधेरे उजालों का बखान लेख रवीन्द्र वर्मा, लोक संस्कृति
5, (जनवरी 2005) पृष्ठ संख्या 64
6. मेरे लेखन की कहानी, लोक संस्कृति (दिसम्बर 2005) विजदान देथां, कैलाश कबीर पृष्ठ संख्या 85